कोंकणी कहानी

दुल्हन

ओलिव्हीन्म गोमिश

अनुवाद : चंद्रलेखा डिसोजा

न्यायालय की छुट्टियाँ खत्म होने के बाद वकालत के पेशे में एकाएक काम बढ़ जाता है । पुराने जमा हुए केस और उससे संबंधित कामों को निपटाना भी आवश्यक होता है । जायदाद के झमेले, उसका बँटवारा, फिर उसके अनुसार पर्चा दाखिल करने व परवाने निकालने के सभी कामों की अच्छी खासी भगदड़ मच जाती है ।

कल से ही न्यायालय का कार्य प्रारंभ हुआ । मेरा दफ्तर मडगाँव जैसे व्यस्त शहर में लेन-देन को निपटाने वाला पंजीकृत कानूनी दफ्तर है, इसलिए मुझे कुछ जादा ही काम संभालना है । जब मैं अपने रोजमर्रा के कार्यों में उलझा हुआ था, तभी यह घटना घटी ।

वह दोपहर का साढ़े बारह बजे का समय रहा होगा । मेरे कार्यालय के सामने एक कार रुकी, जिसमें से एक सुसज्जित नौजवान उतरा । वह गाड़ी से उतरकर सीधे मेरे कमरे के दरवाजे के करीब आया और मुझसे बात करने की इजाजत माँगी । उसके हाव-भाव से लगता था कि वह बहुत जल्दी में है और किसी आवश्यक कार्य के सिल-सिले में आया है, अतः मैंने उसे भीतर आने की इजाजत दे दी ।

बहुत ही कम शब्दों में उसने एक महिला के वसीयतनामे की बातें बताईं, जिसे सुनने के बाद मुझे मेरा काम छोड़कर जाना ही पड़ा । वह महिला आगंतुक नौजवान कायतान की चचेरी बहन थी । हमेशा घर में बंद रहने वाली वह महिला इसी समय अपना वसीयतनामा तैयार कराना चाहती है । वैसे भी उसकी मनःस्थिति संतुलित नहीं रहती है, वह जो भी कार्य करने के लिए कहती है अगर वह उसी समय पूर्ण नहीं हुआ तो वह तुरंत डायन का रूप धारण कर लेती है, आवेश में आगबबूला होकर कुछ भी कर सकती है । उसी ने मुझे इसी समय बुलाया है ।

मैं कायतान के साथ कार में बैठकर रवाना हुआ । राय गाँव की सुनसान जगह में उसका घर था । टेढ़ी-मेढ़ी राह से गुजरते हुए हम करीबन आधे घंटे में वहाँ पहुँचे । अब

आपके सामने कैसे उस घर का बयान करूँ ? वह घर एक जीर्ण-शीर्ण हालत में अब भी कायम था । पता नहीं किस बाबा आदम के जमाने में उसे बनाया गया था । लगता था अब उस मकान की कोई ठीक ढंग से निगरानी भी नहीं रखी जाती है । जंगल से लाई हुई बेशकीमती देवदार वृक्ष की लकड़ियों का वह एक वैभवपूर्ण खंडहर था । जिन की दीवारों पर से चूने का पलस्तर झड़ रहा था और अंदरका पुराना लालपत्थर भी कहीं-कहीं दिखाई पड़ रहा था । उस इमारत के बचे खुचे हिस्से पर काली-नीली डराने-वाली परछाईं अपना अस्तित्व जमा रही थी, वह खंडहरनुमा इमारत कभी भी गिर सकती थी ।

टूटी-फूटी सीढ़ियों पर चढ़ते हुए हम अंदर पहुँचे । कायतान ने आवाज दी उसके साथ ही नौकरानी ने अपने हाथ में जलती मोमबत्ती लेकर प्रवेश किया । सभी ओर की खिड़कियाँ बंद होने के कारण उस विशालकाय इमारत में अंधेरे का साम्राज्य था । मैंने बहुत ही कम बात की और कायतान के साथ उस मोमबत्ती के प्रकाश के सहारे भीतर जाने की राह ली ।

कायतान ने अंदर के एक कमरे का परदा खींचा । मैंने उस छोटे से कमरे में नजर घुमाई । वहाँ का दृष्य देखकर मेरे पत्थर दिल को धक्का पहुँचा । दिन के उजाले में भी उस बंद कमरे में आदम कद आईने के सामने बहुत से दिए प्रज्वलित थे । कोने की एक मेज पर इत्र की शीशियाँ, हेयरपिन, कंघी, नेपकिन, रूमाल आदि चीजे बिखरी पड़ी थीं । इन सब चीजों को स्थिर निगाहों से देखती हुई वह एक कुर्सी पर बैठी थी । उसने दुल्हन वाली, जरी से सजी हुई सफेद साड़ी पहन रखी थी । वह एक मुरझाए चेहरे की औरत थी । शादी का जोड़ा ही पहन रखा था उसने, शुभ्र, सुंदर पर समय के बहाब के साथ अब उस पर अलग-अलग रंगों के दाग पड़े हुए थे । एक समय की पवित्र आभावाली, सुंदर साड़ी अब जगह-जगह से गंदी दिखाई दे रही थी, पावडर की परतों के बावजूद उसका चेहरा, समय से पहले ही बुढ़ापे का शिकार हो गया था । दुख की लकीरों ने उसे और बूढ़ा बना दिया था, और मुरझाया हुआ प्रतीत हो रहा था । मेरे अंदाज से उसकी आयु चालीस के आसपास रही होगी । कमरे के बाकी के हिस्से में यत्र-तत्र चिड़ियों ने घोंसला बना रखा था जिसमें उनकी हल्की आवाज भी निस्तब्धता को भंग कर रही थी ।

कायतान के साथ आहिस्ता-आहिस्ता मैं भीतर गया पर हमारे कदमों की आहट से ही वह चौकन्नी हो गई । उसने अपनी बड़ी-बड़ी गोल-गोल भावपूर्ण आँखों से मुझे पूर्ण रूप से देखा और उसकी आँखें और भी विस्तृत होती गईं । पता नहीं जैसे उसके निश्चल शरीर में कुछ संचार-सा हुआ....उसने हमारी ओर प्रसन्न आँखों से देखते हुए एक अट्टहास किया...हा, हा....हा...हा...।

उस बीमार औरत की हँसी मुझे भयभीत कर गई । मेरे रोम-रोम में एक अनजाना डर समा गया । मेरे जैसे अनुभवी वकील के लिए इस प्रकार की भावना का बहाव अशोभनीय था, फिर भी थोड़े समय के लिए झिझक भरे भाव से मैं किंकर्तव्यविमूढ़-सा हो गया । मैंने अपने आपको संभालने का प्रयत्न किया । अपना पूरा ध्यान बटोरकर ममत्व से उसका हाथ अपने हाथ में लिया और कहा "परेशान न हो बहन रोजा....मैं ही वह वकील दोतोर (आदर सूचक संबोधन) आमांद गोमिश द कोस्त । तुम्हारी क्या आवश्यकता है मुझे साफ-साफ बताओ, देखो शरमाना नहीं, हाँ !"

इन शब्दों को सुनते ही उसके चेहेरे पर सुखद प्रसन्नता का भाव झलका । वह कुछ ज्यादा ही शरमाई । संकुचाते हुए आहिस्ता-आहिस्ता वह अपनी समस्या का खुलासा बताने लगी । उसने बताया कि वह अपनी जायदाद अपने चचेरे भाई कायतान के नाम करना चाहती है । यह निर्णय उसने क्यों लिया है उस पर वह बहस नहीं करना चाहती है ...चाहते तो कायतान से भी इस बात का पता किया जा सकता है । उसने मुझे इसी वक्त वसीयत तैयार करने का हुक्म-सा दिया । ....यह अच्छा ही हुआ, उसके सामने मैं अपने आपको कुछ अस्वस्थ-सा महसूस कर रहा था । कायतान को लेकर मैं उस कमरे से बाहर आया ।

हम अंदर के एक और कमरे के भीतर जाकर बैठे । वैसे तो इस इमारत के सारे कमरे अंधेरे की गर्द में ही डूबे हुए थे, पर यह कमरा अन्य कमरों की तुलना में कुछ ज्यादा प्रकाशवान प्रतीत हो रहा था । कम-से कम इस कमरे की एक खिड़की खुली थी । हम उस कमरे में जाकर बैठे ही थे कि एक नौकरानी ने आकर खाना रख दिया । खाना खाने के बाद कायतान ने अपनी चचेरी बहन रोज़ा की व्यथा के बारे में बताना आरंभ किया ।

रोज़ा इल्मेराल्दा दश दोरिश द सिल्वा अपने धनी परिवार में पिता की इकलौती संतान थी । नाजों में पली, देखने में सुंदर, स्वभाव में अच्छे गुणों वाली, प्रबुद्ध और सभी से अपनत्व का व्यवहार रखनेवाली । सोलह साल की उम्र में उसने एस०एस०सी० की परीक्षा पास कर ली । कॉलेज की पढ़ाई के लिए उसे बंबई भेजा गया । उस समय गोवा में कॉलेज नहीं थे । वह स्वरूपवान, सुंदर, गुलाबी रंग की लड़की किसी भी युवक को अपनी ओर आकर्षित करने में सक्षम थी । वह किसी भी लड़के की परवाह नहीं करती थी, किसी को भी अपने पास फटकने भी नहीं देती थी । रोजा ने बांद्रा के नेशनल कॉलेज में दाखिला लिया । वह अपने किसी संबंधी के घर पर ही ठहरी हुई थी । अल्प काल में ही रोजा का नाम पूरे कॉलेज में मशहूर हो गया था । वह पढ़ाई में अव्वल और नृत्यकला में बेजोड़ थी, साथ ही वह अपने सरल सौंदर्य से सबको चमत्कृत भी करती थी । बहुत-से लोगों ने—लड़कों ने उसे अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास

किया । वह पंद्रह दिनों में एक बार अपने घर पर चिठ्ठी लिखा करती थी । ऐसे ही सात-आठ महीनों के बाद एक दिन उसकी चिठ्ठी आई थी जिसमें रोजा ने लिखा था "मुझे एक सुंदर पंजाबी लड़के से प्यार हो गया है, वह भी मुझे चाहता है।" इसके बाद के छह-सात महिनों में जब भी उसकी चिठ्ठी आती उसमें वह उसी की प्रशंसा लिखती रहती थी....उसके साथ यहाँ नृत्य किया..वहाँ घूमने गए....समंदर के किनारे गए...स्नान किया...सिनेमा देखने गए आदि-आदि । साथ ही वह अधिक रुपए भी मँगाती रहती थी ।

उसके बाद एक दिन रोजा की चिट्ठी आई, जिसमें लिखा था—वह लड़का कॉलेज और बंबई छोड़कर चला गया । जाते समय उसने रोजा को बताकर जाना भी जरूरी नहीं समझा । संक्षेप में कहा जाए तो वह उसे धोखा देकर चला गया । उस निराशा-वस्था में रोजा ने आत्महत्या करने की कोशिश की, पर उसे किसी ने रोका, समझाया । रोज़ा के पिताजी बंबई गए और अपनी बेटी को घर ले आए । एक साल तक रोज़ा घर में ही रही, बाद में धीरे-धीरे उसमें परिवर्तन आया...जीवन के प्रति उसका रुख बदला...अब उसे अपनी जिंदगी के प्रति लगाव नहीं रहा ।

इसके बावजूद भी रोज़ा नई आशा के साथ बंबई वापस गई । वहाँ उसे नई सहेलियाँ और मित्र मिले, अपनी जिंदगी नए सिरे से शुरू करने के लिए वह अग्रसर हुई, उसने अपने नए संबंध जोड़े, स्वच्छंदता से बिचरने का उसे अब चस्का लग चुका था । कोई भी आदत विशेषकर बुरी आदत का तो, मनुष्य निराशा की स्थिति में शिकार हो ही जाता है । अपने भग्न हृदय को वह पूर्ण स्वतथा किसी से जोड़ना चाहती थी । अक्सर कई लड़के ऐसे होते हैं जो लड़कियों की भावनाओं को उकसाते हैं, उनसे अपनी शारीरिक वासना की संतुष्टि तलाशते हैं और लड़की की जिंदगी बरबाद कर देते हैं । ऐसे फरेबी लड़कों के फंदे में फँसकर लड़कियां अक्सर अपनी गलतियों को दोहराती रहती हैं । अगर कोई लड़की ऐसे ग़लत लड़कों के हाथ में न पड़े और अपनी मर्यादा को सलामत रखें तो वह अनमोल बन जाती है, उसका मानभंग नहीं होता । पर अपने यौवन की बसंत ऋतु में बहुत कम लोगों को इस बात का ज्ञान होता है । सिर्फ निर्दोष आनंद उड़ाना अलग बात है, और ग़लत रास्तों में उलझकर स्वच्छंद होना दूसरी बात है । पर यौवन के भावनामय परों को स्वतंत्रता और स्वच्छंदता का यह भेद समझ में आता ही नहीं है ।

....मैंने कायतान को लंबा भाषण देने से रोका, सिन्योर कायतान... तुम जो कहते हो वह सब ठीक है पर, मुझे तो जितना आवश्यक है उतना ही बताओ । रोज़ा की जिंदगी से संबंधित जो अत्यावश्यक प्रसंग है, उसी का बयान करो । मुझे वसीयत लिखनी है, अगर मैं नहीं लिख पाया तो वह मुझपर चिल्लाएगी ।

"मुझसे गलती हो गई, हाँ तो मैं क्या कह रहा....अच्छा...हाँ...।" कहानी का विखरा सूत्र हाथ में लेते हुए उसने कहा। "..रोजा को लगता था कि अपनी जीवन नौका बिना पतबार खुले समंदर में छोड़ दी जाए। अपने आंतरिक तूफान से वह व्यथित थी, मंझधार से किनारे की ओर जाने की कोशिश कर रही थी रोज़ा। ऐसे में एक लड़का उसकी निगाहों में बस ही गया, जिसके कारण उसने घर पर चिठ्ठी लिखी थी–वह मेरा सच्चा दुल्हा है, म्हापसा बारदेज़ में रहनेवाला, दिखने में सुना अच्छे, कुलीन खानदान का है।

वह दुल्हा आया और रोज़ा के माता-पिता को मिला। उन्हें भी वह लड़का पसंद आया, बातें तय हुईं, एक साल के भीतर ही शादी करने की बात पक्की हो गई। सन् 1943 के जनवरी माह का शुभ दिन, विवाह के लिए निर्धारित किया गया।

शादी के दिन से एक माह पूर्व ही रोज़ा घर आई, उस समय वह बी०ए० पास कर चुकी थी। वह बहुत प्रसन्न थी। आनेवाली खुशी की कल्पना से रोज़ा के जीवन में नई बहार आ गई। जिंदगी के अब सारे दिन अपने पति के साथ हमेशा के लिए सुख चैन से गुजार सकूँगी। भगवान की दया से उसके माँ-बाप के पास इतना धन था कि दो पीढ़ी बैठकर भी खाएँ तो भी समाप्त न हो। अब चिंता की कोई बात नहीं थी। उसे अपने जीवन की गलती सुधारने का मौका मिला, उसे नया संसार बसाना था। दुल्हा बंबई में था। इस तरफ धूम-धाम से शादी की तैयारियाँ होने लगीं। शादी के जोड़ों की व्यवस्था हो रही थी। दुल्हे की चिट्ठी आई, उसमें लिखा था वह तेरह जनवरी को पहुँच रहा है। आखिर जमींदार की इकलौती बेटी रोज़ा की शादी थी, इसलिए गाँव में बड़े त्यौहार जैसा माहौल बन गया था। एक के बाद एक खाने की चीजें लेन-देन की चीजों से जमींदार का घर भर गया। हालाँकि जमींदार अब जिंदा नहीं थे, पर उनके परिवार से संबंधित अनेक छोटे-मोटे जमींदारों ने बड़े जमींदार की बेटी की शादी की तैयारी की जिम्मेदारी अपने सिर पर ले ली थी। इसलिए रोज़ा की माँ का बोझ कम हो गया था।

दुल्हे राजा पधारे, पूरा माहौल खुशियों से भर उठा। दुल्हन को मिले, सब तय हो गया। पंद्रह तारीख को सुबह दस बजे राय गाँव के चर्च में शादी की प्रार्थना का समय तय हुआ। दुल्हा म्हापसा जा रहा हूँ कहकर अपने घर गया।

कायतान धीमे शब्दों में कहता रहा...पूरी रात शादी की तैयारियाँ चलती रहीं। आखिर उमंग भरी सुबह प्रस्फुटित हुई। मेरी चचेरी बहन रोज़ा अब शर्मिली दुल्हन; सुख के झूले पर सवार होकर, शादी का जोड़ा पहनकर तैयार हुई। वह सफेद सुंदर जरी

की साड़ी में अत्यंत सुंदर दिख रही थी । रोज़ा के लिए वह बहुत बड़ा खुशी का दिन था । चर्च जाने का समय हो गया ।

अचानक पौने दस बजे तारवाला तार लेकर आया । सबने सोचा बधाई का तार होगा । पता रोज़ा का था । मैंने ही खोला था । उसने मेरे हाथ से तार झपट लिया । तार पढ़ने के बाद उसका गला सिसकियों से भर आया । उसने अपनी छाती पीटनी शुरू की । वह ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगी, थर-थर काँप रही थी, वह अपना संतुलन खो बैठी । इससे पहले कि में उसे संभालूँ वह जमीन पर गिरी और बेसुध हो गई।

....तार में लिखा था—"मैं शादी के लिए आ नहीं सकता, मेरी आशा छोड़ देना ....भेजनेवाला...एदबार्दी दुल्हे का नाम।" तार बंबई से आया था। आखिर इतना बड़ा धोखा भी मेरी बहन को सहना था । क्या किया जा सकता था ?

अक्सर होश आते ही रोज़ा अपना सुंदर मुख छिपा लेती थी । उसकी भावना का जो बाँध, उस दिन टूटा था, उससे आज तक वह चैन नहीं पा सकी ।...बंद कमरे में वह अपने आपको छिपा लेती है । अपने दुल्हे पर अभी तक उसे विश्वास है । शादी का जोड़ा पहनकर वह उसकी राह देखती रहती है । दूसरे-तीसरे दिन स्नान करती है, फिर वही शादी का जोड़ा पहन लेती है, पावडर लगाती है, अपने दुल्हे की राह देखती है, उस टेबल के पास बैठकर अपने आपको झूठी तसल्ली देती है । वाकई उसकी मत मारी गई है । बीच-बीच में उठती है, चिल्लाती है, घूमती है, ज़ोर-ज़ोर से बड़बड़ाती है, बोलती है । उसका दुख तो वही जाने और उसका भगवान । उस क्रूर जुल्मी दुल्हे का कोई पता ही नहीं चला । वह कहाँ है, कोई नहीं जानता । रोज़ा की माँ भी रोज़ा के गम में चल बसी । अब बाकी है रोज़ा हमेशा अपने नसीब को रोती हुई । क्या हमें इस ज़िंदा लाश को जीवित रखने के लिए भगवान का शुक्रिया अदा करना चाहिए ?

इन शब्दों के साथ कायतान ने कहानी को समाप्त किया। कलेजे पर आरी चलानेवाली इस दुख भरी हकीकत को सुनकर मेरा मन भी दुखी हो गया । उसका दुख अब मेरा दुख हो गया । अपने किए की सजा तो हर एक को भुगतनी पड़ती है, फिर कितनी कड़वाहट है इस सज़ा में इस बात पर विचार करते-करते मैं यह भूल ही गया कि मैं यहाँ किसी बहुत ही जरूरी काम से बुलाया गया हूँ ।

पर अब रोज़ा की तरफ मैं नजर नहीं उठा सका । मेरी आँखें आर्द्र हो गईं । कितनी नसीबवान लड़की, खुशियों की लहरों पर जिसे अपना जीवन मिला था, वही लड़की अब विधाता के क्रूर हाथों में फँसी हुई थी । इतने साल गुज़र गए । समय से पहले ही अब वह बूढ़ी हो गई थी । मृत्यु के लंबे हाथ न जाने कब उसे दबोच लेंगे ।

काल के थपेड़ों से अपना जीवन दीप बुझने से पहले ही वह अपने वंश के चिराग को प्रज्वलित रखना चाहती थी । शायद इसीलिए वह यह वसीयत कर रही थी ।

मैंने जल्दी-जल्दी वसीयत लिख डाली, आहिस्ता से उस पर उसके हस्ताक्षर करवाए। दुख की भावनाओं के गुबारों को सहते, दुखी मन से संसार की विचित्र वक्रता को नकारते हुए मैं वहाँ से चल पड़ा । पर उस दुखी दुल्हन की सुंदर तस्वीर कभी-कभी मेरी आँखों के सामने आज भी आती है, उस दृश्य की कौंध मन पर कचोट कर जाती है ।

पृष्ठ 164 का शेष भाग

"देखने में बहुत ही सुंदर है न ?"

"हाँ" ।

वह हँस पड़ा ।

उसकी माँ भी हँस दी ।

आँसू से भीगे माँ के गालों पर उसने अपने चेहरे को सटा दिया ।

तब उसे बड़ी खुशी हुई ।